पुरुष सूक्त (ऋग्वेद : 10-90, यजुर्वेद अध्याय 31)

ॐ श्री गुरुभ्यो नमः । हरिः ओम् ।

सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात ।
स भूमिँ सर्वतः स्पृत्वाऽत्यतिष्ठद्यशाङ्गुलम् ।।1।।

जो सहस्रों सिर वाले, सहस्रों नेत्रवाले और सहस्रों चरण वाले विराट पुरुष हैं, वे सारे ब्रह्माण्ड को आवृत करके भी दस अंगुल शेष रहते हैं ।।1।।

पुरुषऽएवेवँ सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम् ।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ।।2।।

जो सृष्टि बन चुकी, जो बनने वाली है, यह सब विराट पुरुष ही हैं । इस अमर जीव-जगत के भी वे ही स्वामी हैं और जो अन्न द्वारा वृद्धि प्राप्त करते हैं, उनके भी वे ही स्वामी हैं ।।2।।

एतावानस्य महिमातो ज्यायाँश्च पूरुषः ।
पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ।।3।।

विराट पुरुष की महत्ता अति विस्तृत है । इस श्रेष्ठ पुरुष के एक चरण में सभी प्राणी हैं और तीन भाग अनंत अंतरिक्ष में स्थित हैं ।।3।।

त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवत्पुनः ।
ततो विष्वङ् व्यक्रामत्साशनानशनेऽअभि ।।4।।

चार भागों वाले विराट पुरुष के एक भाग में यह सारा संसार, जड़ और चेतन विविध रूपों में समाहित है । इसके तीन भाग अनंत अंतरिक्ष में समाये हुए हैं ।।4।।

ततो विराडजायत विराजोऽअधि पूरुषः ।
स जातोऽअत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः ।।5।।

उस विराट पुरुष से यह ब्रह्माण्ड उत्पन्न हुआ। उस विराट से समष्टि जीव उत्पन्न हुए । वही देहधारीरूप में सबसे श्रेष्ठ हुआ, जिसने सबसे पहले पृथ्वी को, फिर शरीरधारियों को उत्पन्न किया ।।5।।

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः सम्भृतं पृषदाज्यम् ।
पशूँस्ताँश्चक्रे वायव्यानारण्या ग्राम्याश्च ये ।।6।।

उस सर्वश्रेष्ठ विराट प्रकृति यज्ञ से दधियुक्त घृत प्राप्त हुआ (जिससे विराट पुरुष की पूजा होती है) । वायुदेव से संबंधित पशु, हरिण, गौ, अश्वादि की उत्पत्ति उस विराट पुरुष के द्वारा ही हुई ।।6।।

तस्माद्यज्ञात् सर्वहुतऽऋचः सामानि जज्ञिरे ।
छन्दाँसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ।।7।।

उस विराट यज्ञ-पुरुष से ऋग्वेद एवं सामवेद का प्रकटीकरण हुआ । उसी से यजुर्वेद एवं अथर्ववेद का प्रादुर्भाव हुआ अर्थात् वेद की ऋचाओं का प्रकटीकरण हुआ ।।7।।

तस्मादश्वाऽजायन्त ये के चोभयादतः ।
गावो ह जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाताऽअजावयः ।।8।।

उस विराट यज्ञ-पुरुष से दोनों तरफ दाँतवाले घोड़े हुए और उसी विराट पुरुष से गौएँ, बकरियाँ और भेड़ें आदि पशु भी उत्पन्न हुए ।।8।।

तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन् पुरुषं जातमग्रतः ।
तेन देवाऽअयजन्त साध्याऽऋषयश्च ये ।।9।।

मंत्रद्रष्टा ऋषियों एवं योगाभ्यासियों ने सर्वप्रथम प्रकट हुए पूजनीय विराट पुरुष को यज्ञ (सृष्टि के पूर्व विद्यमान महान ब्रह्मांडरूप यज्ञ अर्थात् सृष्टि-यज्ञ) में अभिषिक्त करके उसी यज्ञरूप परम पुरुष से ही यज्ञ (आत्मयज्ञ) का प्रादुर्भाव किया ।।9।।

यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन् ।
मुखं किमस्यासीत किं बाहू किमूरू
पादाऽउच्येते ।।10।।

संकल्प द्वारा प्रकट हुए जिस विराट पुरुष का ज्ञानीजन विविध प्रकार से वर्णन करते हैं, वे उसकी कितने प्रकार से कल्पना करते हैं ? उसका मुख क्या है ? भुजा, जाँघें और पाँव कौन-से हैं ? शरीर-संरचना में वह पुरुष किस प्रकार पूर्ण बना ? ।।10।।

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः ।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्याँ शूद्रोऽअजायत ।।11।।

विराट पुरुष का मुख ब्राह्मण अर्थात् ज्ञानीजन (विवेकवान) हुए। क्षत्रिय अर्थात् पराक्रमी व्यक्ति, उसके शरीर में विद्यमान बाहुओं के समान हैं। वैश्य अर्थात् पोषणशक्ति-सम्पन्न व्यक्ति उसके जंघा एवं सेवाधर्म व्यक्ति उसके पैर हुए ।।11।।

चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्यो अजायत।
श्रोत्राद्वायुश्च प्राणश्च मुखादग्निरजायत॥12॥

विराट पुरुष परमात्मा के मन से चन्द्रमा, नेत्रों से सूर्य, कर्ण से वायु एवं प्राण तथा मुख से अग्नि का प्रकटीकरण हुआ॥12॥

नाभ्याऽआसीदन्तरिक्षँ शीर्ष्णो द्यौः समवर्त्तत।
पद्भ्याँ भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा
लोकाँ२ऽकल्पयन्॥13॥

विराट पुरुष की नाभि से अंतरिक्ष, सिर से द्युलोक, पाँवों से भूमि तथा कानों से दिशाएँ प्रकट हुईं। इसी प्रकार (अनेकानेक) लोकों को कल्पित किया गया है (रचा गया है)॥13॥

यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत।
वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्मऽइध्मः शरद्धविः॥14॥

जब देवों ने विराट पुरुष को हवि मानकर यज्ञ का शुभारम्भ किया, तब घृत वसंत ऋतु, ईंधन (समिधा) ग्रीष्म ऋतु एवं हवि शरद ऋतु हुई॥14॥

सप्तास्यासन् परिधयस्त्रिः सप्त समिधः कृताः।
देवा यद्यज्ञं तन्वानाऽअबध्नन् पुरुषं पशुम्॥15॥

देवों ने जिस यज्ञ का विस्तार किया, उसमें विराट पुरुष को ही पशु (हव्य) रूप की भावना से बाँधा (नियुक्त किया), उसमें यज्ञ की सात परिधियाँ (सात समुद्र) एवं इक्कीस (छंद) समिधाएँ हुईं॥15॥

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि
धर्माणि प्रथमान्यासन्।
ते ह नाकं महिमानः सचन्त
यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः॥16॥

आदिश्रेष्ठ धर्मपरायण देवों ने यज्ञ से यज्ञरूप विराट सत्ता का यजन किया। यज्ञीय जीवन जीने वाले धार्मिक महात्माजन पूर्वकाल के साध्य देवताओं के निवास स्वर्गलोक को प्राप्त करते हैं॥16॥

ॐ शांतिः ! शांतिः !! शांतिः !!!

(यजुर्वेदः 31.1-16)

सूर्य के समतुल्य तेजसम्पन्न, अहंकाररहित वह विराट पुरुष है, जिसको जानने के बाद साधक या उपासक को मोक्ष की प्राप्ति होती है। मोक्षप्राप्ति का यही मार्ग है, इससे भिन्न और कोई मार्ग नहीं। (यजुर्वेदः 31.18)